सेठ जिनदास

बच्चोंकी कहानियाँ

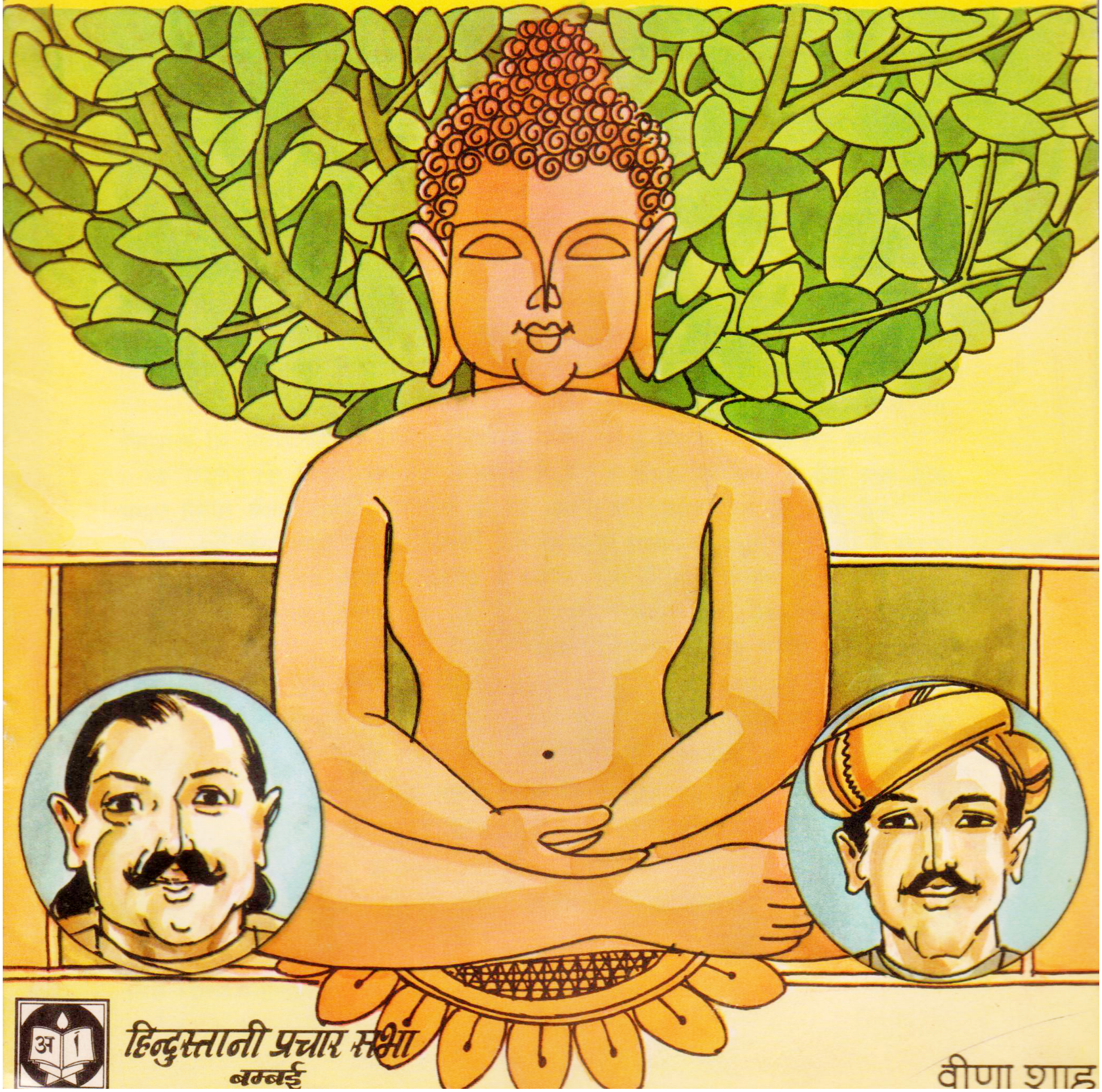

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

वीणा शाह

हमारे देश की संस्कृति दुनिया में सबसे पुरानी और काफी समृद्ध है। मगर आपसी झगडों, जलन और बैर की वजह से हम कमज़ोर हो गये हैं और इसी वजह से डरी-सहमी हालत में जी रहे हैं। नये ज़माने की शिक्षा भी हमें सुधार नहीं पाई है। इसीलिए इस कमज़ोर और ख़तरनाक हालत से हम उबर नहीं पा रहे हैं। फिर भी यह हक़ीक़त है कि हमारी संस्कृति अत्यंत जीवंत है, कभी मिट नहीं सकती है।

दूसरे प्राणियों के मुक़ाबले आदमी में यह एक विशेषता है कि उसमें धर्म की सूझबूझ है। अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म परखने का उसे विवेक है। मैं तो इसे ही सच्चा धर्म मानता हूं। 'धर्म' वही है जिससे आदमी का सुखी, सार्थक जीवन बनता है। धार्मिक इन्सान समझता है कि दूसरों के सुख में उसका भी सुख है। दूसरों को तबाह करके कोई सुखी नहीं हो सकता। दूसरों के दुःख से जो सुख उठाता है, वह अधर्मी है।

सच्चाई और अहिंसा, धर्म पर चलने के दो रास्ते हैं। दुनिया के सभी धर्मों में इन दो बातों पर ज़ोर दिया गया है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई, पारसी, जैन, सिख आदि सभी धर्मों के पैग़म्बरों ने धर्म के जिन आदर्शों की बात कही है, वह हर इन्सान के लिए समान रूप से लागू होती है। हमारे देश की परंपरा में सब धर्मों के लिए इज़्ज़त की भावना रही है। हिन्दू धर्म का दायरा बहुत बड़ा और सबका भला चाहनेवाला रहा है। अफ़सोस है तो इस बात का कि हम लोगों में एक के बाद एक कमज़ोरियां आती गईं और एक उदार धर्म की अनमोल दौलत हम संभाल नहीं सके।

आज इस बात की ज़रूरत है कि दुनिया के विकसित धर्मों में हमारे लिए जो आवश्यक बातें कही गयी हैं उन्हें हम समझें और अपने जीवन में उन पर चलने की कोशिश करें।

नई पीढ़ी को सही समझ और शिक्षा देने के लिए ऐसे विचार उनके सामने रखना ज़रूरी है जिससे वे आदर्शों की तरफ प्रेरित हों और ज़िन्दगी का सही रास्ता उन्हें मिल सके।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने इसी उद्देश्य से दुनिया के मुख्य धर्मों में जो शिक्षाप्रद कहानियां हैं, बडे-बडे संत-पैग़म्बरों की ज़िन्दगी में जो सच्ची घटनाएं हुई हैं, उन्हें लेकर एक सौ सचित्र पुस्तकें छापने की योजना बनाई है।

कहानियां इस तरह रखी गयी हैं कि बच्चों को वे उपदेश नहीं, जीवन से जुडी हुई मालूम हों और आसानी से समझ में आ जायें। मुझे उम्मीद है कि बच्चों के माता-पिता भी इन कहानियों को दिलचस्पी से पढ़ेंगे और अपने जीवन को समृद्ध करेंगे।

मुझे उम्मीद है कि इस कोशिश को पसन्द किया जायेगा, इस पर अमल किया जायेगा और इसका प्रचार किया जायेगा।

मोरारजी देसाई

अध्यक्ष,

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

संपादक : मूलशंकर भट्ट बच्चों की कहानियां – ७

सेठ जिनदास

वीणा शाह

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

बम्बई

© हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, १९८१

मूल्य :
दो रुपये

मुद्रक :
अकील दीवानजी
ऑनलुकर प्रेस
१६, मासुन डाक
कोलाबा, बम्बई ४०० ००५

प्रकाशक :
वाडीलाल डगली
मानद मंत्री
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग
बम्बई ४०० ००२

मुख्य विक्रेता

एस० चान्द एन्ड कंपनी लि०
मुख्य कार्यालय : रामनगर, नयी दिल्ली-११००५५
शो रूम : ४/१६-बी, आसफ अली रोड, नयी दिल्ली-११०००२

शाखाएं :

अमीनाबाद पार्क, लखनऊ-२२६००१
२८८/जे, बिपिनबिहारी गांगुली स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१२
सुल्तान बाजार, हैदराबाद-५००००१
३, गांधी सागर ईस्ट, नागपुर-४४०००२
खजांची रोड, पटना-८००००४
माई हीरां गेट, जालन्धर-१४४००८
१५२, अना सलाए मद्रास-६००००२
ब्लकी हाउस, १०३/५ बालचन्द हीराचन्द मार्ग, बम्बई ४००००१
के० पी० सी० सी० बिल्डिंग, रेसकोर्स रोड, बंगलोर-५६०००९
६३१-७ महात्मा गांधी रोड, एर्नाकुलम, कोचीन-६८२०१८

सेठ जिनदास

करीब ढ़ाई हजार साल पहले की बात है।

आज के बिहार राज्य को तब मगध कहते थे। मगध में भगवान बुद्ध और भगवान महावीर पांव पैदल घूम-घूमकर सच्चे मानव धर्म का ज्ञान दिया करते थे।

वे लोगों को समझाते थे कि किसी प्राणी पर हिंसा न करो, सबके लिए प्रेमभाव रखो, किसी की निंदा न करो, किसी का धन हड़पने का विचार न करो, संयमित जीवन रखो। उनका जीवन इन्हीं उपदेशों के आधार पर चलता था।

बातों का अमल सामने देखकर लोगों पर उनके उपदेशों का गहरा असर होता था। असंख्य लोग उनके प्रवचन सुनने जमा होते थे। इन प्रवचनों ने कई लोगों के जीवन में बड़ा परिवर्तन ला दिया था।

इसी मगध देश में जिनदास नाम का एक बहुत ही अमीर व्यापारी रहता था। वह जितना अधिक कमाता था, उतना ही अधिक दान भी करता था। उसके दरवाजे से कोई याचक बिना कुछ प्राप्त किये नहीं लौटता था।

सारे देश में उनकी साख थी।

भगवान महावीर के उपदेशों को उसने अपने जीवन में उतारा था। उसका जीवन धर्ममय बन गया था। शहर का नगर सेठ होने के बावजूद, उसे किसी प्रकार का घमण्ड नहीं था।

उसी शहर में, एक दूसरा भी ऐसा ही प्रतिष्ठित, धनी व्यापारी रहता था।

उसका नाम शांतनु था।

उसकी जायदाद भी अपार थी। उम्र उसकी जिनदास से कम थी। उसकी पत्नी कुंजी देवी भी बहुत सुंदर, सुशील और धर्मप्रेमी थीं।

मगर अच्छे-बुरे दिनों का चक्र चलता ही रहता है। सदा एक-सा सुख नहीं मिलता है।

शांतनु सेठ के सुखी जीवन पर बुरे दिनों की छाया पड़ने लगी और देखते-

देखते दुःख ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया। व्यापार में नुकसान हुआ। विदेश गये जहाजों का कोई ठिकाना न था और पैसे-पैसे के लिए वे मोहताज हो गये। दो वक्त भरपेट खाना मिलना भी मुश्किल हो गया। कभी-कभी तो कई-कई दिनों तक अनाज का दाना भी नसीब न होता। सारी समृद्धि मिट्टी के ढेर में बदल गयी।

सोने के प्याले में दूध पीनेवाले शांतनु सेठ को, अब माटी के ठीकरे में छाछ भी न मिल पाती।

शांतनु सेठ बड़े समझदार थे और उनकी पत्नी तो उनसे भी अधिक समझदार थीं। ऐसी दुर्दशा के समय भी उन लोगों ने धैर्य नहीं खोया, भगवान का नाम नहीं भूले। लेकिन दुख सहने की भी एक सीमा तो होती है।

कई दिनों के फांके के बाद आखिर शांतनु सेठ का धैर्य टूट गया। वे आत्म-हत्या की बात सोचने लगे। बार-बार उनके दिमाग में आत्महत्या का विचार मंडराने लगा। उनके मन में गहरा अंधेरा छा गया।

उनकी पत्नी को जब सेठ जी की निराशा का पता चला तो वे कांप उठीं। सेठ जी से बोलीं, "भगवान महावीर के भक्त आप यूं हिम्मत हार गये? निराश होने से क्या फायदा? पुरुषार्थ कीजिए, मेहनत कीजिये। हमेशा ही तो नुकसान नहीं जायेगा। हो सकता है, हमारे दुर्दिन समाप्त होने पर हों।"

शांतनु बोले, "देवी, तुम जो भी कहती हो, सही है। आत्महत्या महापाप है। मगर मेरा भी तो फर्ज है कि अपनी पत्नी को दो वक्त की रोटी दे सकूं।

"इससे बद्तर और क्या लाचारी हो सकती है कि मैं तुम्हें रोटी तक देने से मजबूर हूं? व्यापार के सिवा मुझे और कुछ आता भी तो नहीं है। और व्यापार बिना धन के हो नहीं सकता। क्या करूं? आत्महत्या का विचार न करूं तो और करूं भी क्या?"

कुंजी देवी ने कहा, "इन गलत विचारों को छोड़कर मेहनत करना शुरू करो। हाथ-पर-हाथ धरकर बैठने से क्या होगा?"

शांतनु ने पूछा, "कौन-सा काम करूं? चोरी के सिवा अब कोई काम मेरे

लिए नहीं बचा है। किसी के पास मांगने जाने का साहस नहीं है। जिन हाथों ने सदा दान ही किया है, उन हाथों से कैसे किसी के पास मांगने जा सकता हूं? तुम्हीं कहो, क्या चोरी करूं किसी के घर? कहीं पर सेंध मारूं?"

सेठानी एक क्षण तो चोरी की बात सुनकर सन्न रह गयीं। लेकिन सारी परिस्थिति का विचार करने के बाद उन्होंने सेठ को चोरी करने की इजाजत दे दी।

खूब चर्चा-विचार के बाद यह तय हुआ कि चोरी तो की ही जाये, मगर किसी ऐसे धार्मिक, दयालु सेठ के घर चोरी की जाये जहां राज खुलने न पाये और यदि खुल भी जाये तो वह जेल की सजा न दिलवाये।

दोनों के बीच यह भी तय हुआ कि चोरी के धन से जब फायदा होगा तो सबसे पहले चोरी का धन सूद-दर-सूद उसके मूल मालिक को लौटा दिया जायेगा। यह सब तय तो हुआ मगर ऐसा अमीर और उदार दिल सेठ कौन है? किसके यहां चोरी की जाये?

सोचते-सोचते उन्हें खयाल आया कि सेठ जिनदास ऐसे ही आर्थिक और मानसिक हैसियत के सेठ हैं। श्रावक संघ के प्रमुख और भगवान के भक्त हैं। उनके घर यदि चोरी की भी जाये तो वे शोर नहीं मचायेंगे। वे सदा दूसरों के दोषों को परदा देने की कोशिश करते थे, कभी उन दोषों को खोलने की फिक्र में नहीं रहते थे।

इन्हीं दिनों नगर में आचार्य धर्मघोष सूरि जी पधारे।

नगर के उद्यान में उन्होंने निवास किया। लोग उनका उपदेश सुनने एकत्र हुए। हद से ज्यादा भीड़ जमा हुई थी।

उनका प्रवचन सुनने सेठ जिनदास भी वहां पधारे। वे आचार्य के सामने ही एक खास विधि से गरम आसन पर बैठे। इस विधि के लिए सेठ ने बाकी सारे कपड़े उतारकर बाजू में रखे और गले का कीमती हार भी निकालकर कपड़ों पर रख दिया।

सेठ का ध्यान व्याख्यान में लग गया, और तभी शांतनु भी वहीं पर आकर उनकी बगल में बैठ गये।

सेठ जिनदास को तो कल्पना भी न थी कि ऐसे पवित्र धर्मस्थानक में कभी

चोर भी आ सकता है। वे तो सबको अपने जैसा ही समझते थे।

शांतनु व्याख्यान सुन रहे थे मगर उनका मन नहीं लग रहा था। बार-बार उनकी नजर हार पर चली जाती थी। वे सोच रहे थे कि ऐसा अमूल्य हार यदि उठा लिया जाये तो बेड़ा पार हो जाये। सारी सभा आचार्य जी के व्याख्यान में रसमग्न हो गयी थी। सभा का ऐसा शांत वातावरण था कि एक सूई भी गिरने की आवाज़ आ सकती थी। जिनदास सेठ तो भाव-विभोर हुए जा रहे थे।

शांतनु ने देखा कि यही ठीक मौका है। चारों ओर एक बार नजर घुमाकर देखा और उन्होंने हार खिसका लिया। हार उनके हाथ आया और वे भाग चले।

कुछ देर बाद प्रवचन पूरा हुआ। लोग उठने लगे। जिनदास सेठ भी अपने उतारे कपड़े पहनने लगे।

"हार ? अरे, मेरा हार कहां गया ? यह क्या, गायब ?" वे धीमे-धीमे बोले।

इधर-उधर देखा पर हार न दिखा।

गजब का धैर्य था उनका। बिलकुल चुप हो रहे।

उन्होंने सोचा कि यदि मैं हार के लिए शोरगुल मचाऊंगा तो इस पवित्र धर्मस्थानक की कितनी बदनामी होगी। लोए सोचेंगे कि धर्मस्थानक पर भी गुंडे लोग चोरी करने आते हैं। कितनी नोचता है। लोग आना कम कर देंगे। बस, और जिनदास ऐसे हो गये जैसे कुछ हुआ ही नहीं। हंसते चेहरे से अपने घर चले गये।

घर पहुंचकर भी उन्होंने हार की चर्चा किसी से न की। सेठ जान तो गये थे कि हार शांतनु के सिवा और किसी ने नहीं लिया है। उसे सेठ ने अपनी बाजू में बैठते देखा था, और यह भी देखा था कि व्याख्यान पूरा होने के पहले ही वह उठकर चला गया था। सब जानकर भी सेठ अनजान रहे। उनका जीवन रोज की तरह सामान्य चलता रहा।

शांतनु ने हार चुराया था फिर भी उसके प्रति जिनदास के स्नेह में कोई कमी नहीं आयी। वे सोचते थे कि शांतनु धर्मनिष्ठ नौजवान है। अभी उसके दिन अच्छे नहीं हैं, इसलिए बेचारा फंसा हुआ है और उसे ऐसी चोरी करनी पड़ी है।

सेठ जिनदास यह भी सोचने लगे कि मेरा बंधु इतनी मुसीबत में फंसा हो और मुझे इस बात का आजतक खयाल ही न रहा ? कितनी भारी विपदा होगी उसकी कि उसे ऐसी चोरी करनी पड़ी!

इसमें उन्हें अपना दोष भी दिखा, "संघ का प्रमुख होकर भी मुझे इतनी फुर्सत न मिली कि संघ के ही एक व्यक्ति की तकलीफों को मैं जान सकूं ? दूसरों की मुसीबतें जो देख नहीं सकता है, वह संघ का प्रमुख होने लायक ही कैसे है ?"

वे बार-बार अपने को ही कोसते रहे। दूसरों की मुसीबत को अपनी मुसीबत

समझना साधारण आदमी के बस का नहीं होता है। इसके लिए एक बड़ी दृष्टि की जरूरत होती है। जिनदास के पास वह दृष्टि थी। तभी तो वे चोर के दोष भी अपने ऊपर लेने की सोच रहे थे।

शांतनु ने हार ले जाकर अपनी पत्नी के हाथ में रख दिया।

कुंजी देवी चोरी का हार देखकर एक बार तो कांप गयीं। ऐसा काम पहले तो कभी किया ही नहीं था। कितनी

घुटन होगी इस चोरी के पीछे ! लाचारी आदमी से कैसा-कैसा काम करवा लेती है। करोड़ों के मालिक सेठ को ऐसे चोरी करनी पड़े तो इसे भाग्य का खेल ही कहा जा सकता है।

इतनी मुसीबतों के बीच भी शांतनु और कुंजी देवी ने अपने आदर्शों को ताक पर नहीं रख दिया था। उनका दिमाग और दिल अभी भी आदर्श की तरफ झुकता था। शांतनु ने हार तो चुराया, मगर अब उसका किया क्या जाये? चोरी करने का ध्येय तो यही था कि चोरी के धन से नया व्यापार-धंधा शुरू किया जाये ताकि फिर से नया जीवन जिया जा सके।

उन्हें अब खयाल आने लगा कि न जाने इस हार के पीछे सेठजी की कितनी यादें छिपी होंगी। किसी के प्रेम की निशानी होगी यह। इस हार को बेंचना तो उचित है ही नहीं। फिर क्या इसे कहीं बन्धक रखा जाये ? लेकिन समझो कि गिरवी रखा यह हार हम किसी हालत में छुड़ा न सके तो ? तो क्या घर पर ही रखा जाये ? तब तो भयंकर पाप में पड़ेंगे। इस प्रकार तर्क-वितर्क करते-करते पति-पत्नी किसी को नींद न आयी।

सुबह होने को थी कि अचानक कुंजी देवी ने पति से कहा, "मैं समझती हूं कि यह हार जिनदास सेठ के पास ही गिरवी रखा जाये। इससे अधिक अच्छा रास्ता तो कोई और नहीं सूझता है।"

शांतनु पत्नी की बात सुनकर हंस पड़ा, "देवी, तुम कभी-कभी हद से ज्यादा आदर्शों की बातें करने लगती हो। कमाल है तुम्हारी भी ! सेठ जी का माल सेठ जी के ही पास बन्धक रखा जाये, यह कितनी बेतुकी बात कही तुमने। फिर मेरा क्या होगा ? जानती हो, सेठ मुझे सीधे जेल भिजवा देंगे। समाज में मैं मुंह दिखाने लायक नहीं रहूंगा। कुछ तो समझदारी की बात करो।"

कुंजी देवी ने बड़ी शांति से कहा, "सेठ जी, आपको जिनदास सेठ का परिचय नहीं है क्या ? यह भी सोचा कि हार कितने दिनों से गायब है ? और आजतक आपने इस बात की चर्चा कहीं सुनी है ? कौन आदमी इतने दिनों तक

चुप बैठा रहेगा ? वे चाहते तो आपको हवालात की हवा खिला सकते थे। इसलिए ही सेठ जी, मैं कहती हूं कि हार उन्हीं के घर गिरवी रखा जाये।"

शांतनु के पास अब कहने को कुछ बचा नहीं। पत्नी की बात उसने मान ली और हार लेकर, डरता-सकुचाता सेठ जिनदास के पास पहुंचा।

सेठ जी ने उसका हृदय से सत्कार किया और अपने पास बैठाया, "कहो शांतनु कुमार, आज इधर कैसे आना हुआ ? क्या हुक्म है बताओ !"

शांतनु ने तो सपने में भी नहीं सोचा था कि जिनदास इस प्रकार उसका सत्कार करेंगे। शर्म से मुंह उठाना भी उसे भारी पड़ रहा था। मगर अब आया था तो चुप कैसे रहता।

सकुचाते हुए शांतनु ने कहा "सेठजी, क्या कहूं, चारों ओर से मुसीबतों ने मुझे घेर लिया है। अब तो ऊपर आकाश और नीचे धरती के सिवा कोई आसरा नहीं है मेरा। मेरा सारा धंधा-रोजगार चौपट हो गया है। आपसे क्या छिपाना, सोचता हूं कि किस्मत साथ दे तो नया धंधा शुरू करूं। धंधे के लिए पैसों की जरूरत है।

"अतः मैं आपके पास एक कीमती हार गिरवी रखने आया हूं। कृपया उसके बदले में मुझे थोड़ा धन दें तो आपकी बड़ी मेहरबानी होगी," और जेब में हाथ डालकर शांतनु ने हार निकाला। उसका दिल धड़क रहा था, और पसीने से उसका कपाल भींग आया था। लगता था जैसे उसकी सांस रुक जाएगी। एक-एक क्षण उसे एक युग के समान लगने लगा।

सेठ जी ने हार देखते ही पहचान लिया पर चौंके बिलकुल नहीं। सहज भाव से बोले, "अरे भाई, हार गिरवी रखने की क्या जरूरत है? तुम्हें जितने पैसे चाहिये उतने पैसे ले जाओ, मैं कहां ना कहता हूं। साहस के साथ व्यापार शुरू करो, अवश्य सफलता मिलेगी। भाई की चीज भाई गिरवी रखता है क्या? जा, हार ले जा वापस।"

अब तो शांतनु को काटो तो खून नहीं।

इतना भला भी इंसान हो सकता है क्या? उसकी आंखों में आंसू छलक आये। लेकिन वह बगैर हार दिये पैसे क्यों ले, यह सोचकर वह जिद पर उतर

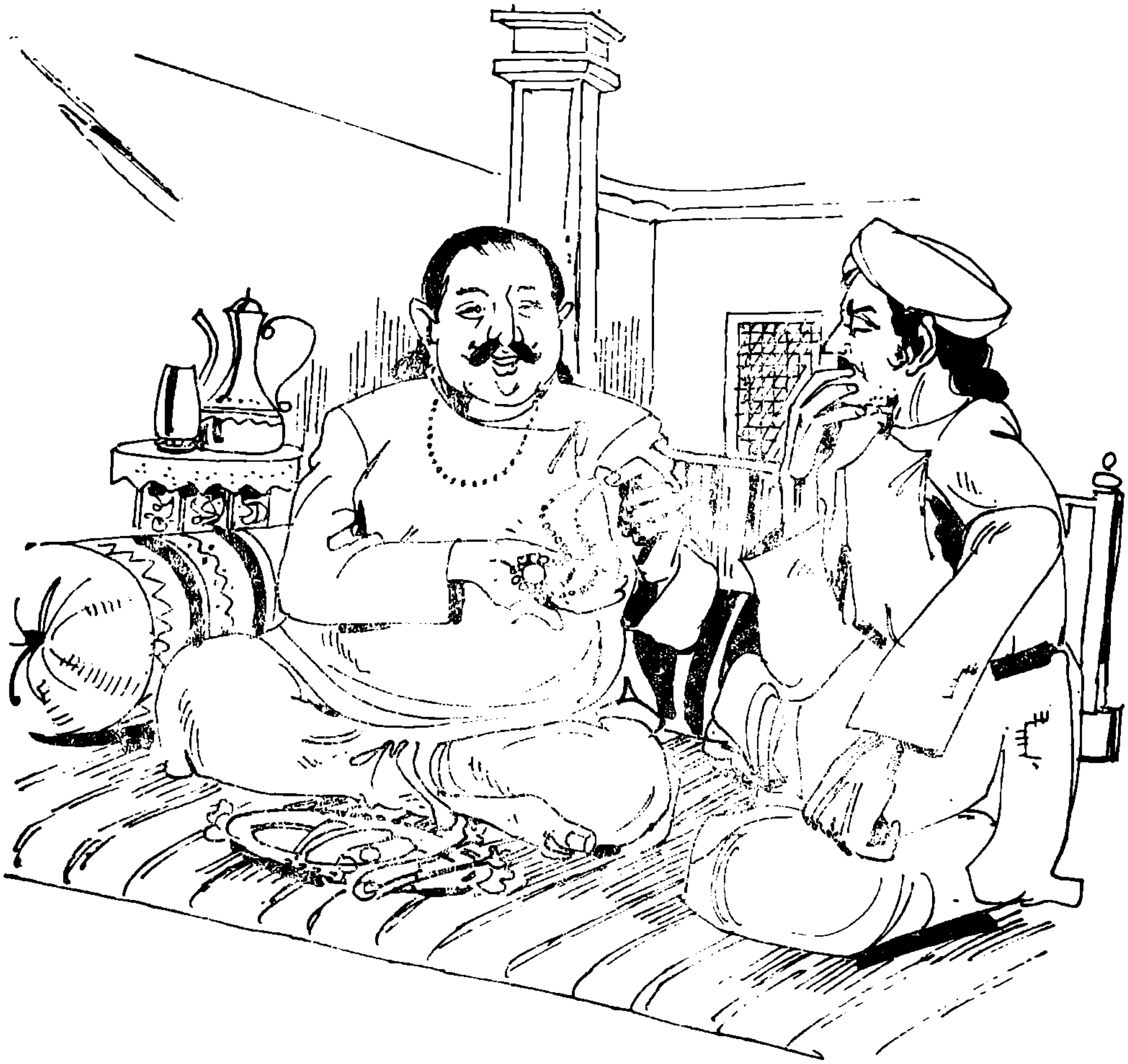

आया कि जब तक आप हार रखेंगे नहीं, तबतक मैं आपके पैसों को नहीं छुऊंगा। आखिर जिनदास ने वह हार अपने पास गिरवी रख लिया।

उन्होंने अपने बेटे को बुलाया और हार रखने के लिए देते हुए कहा, "बेटे, शांतनु कुमार को हार की कीमत से भी अधिक रुपये देना। समय आने पर वे हार छुड़ा लेंगे।"

हार देखकर लड़का चौंक पड़ा। वह सोचने लगा कि पिताजी न जाने क्यों जानते हुए भी अनजान बन रहे हैं। जरूर

पत्नी ने पति से कहा, " स्वामी, अब कर्तव्य
पूरा करने का समय आ गया है ।"

इसमें कुछ भेद होगा। फिर भी आज्ञा-पालक बेटे ने हंसते हुए हार की कीमत से ज्यादा धन दे दिया।

शांतनु ने घर पहुंचकर अपनी पत्नी से सारी बात बतायी। उसे तो पहले से ही जिनदास के आदर्शों पर भरोसा था।

शांतनु ने उन पैसों से व्यापार करना आरंभ किया। खूब सतर्क रहकर, बड़ी कुशलता से उसने अपना धंधा संभाला। उसका व्यापार सुधरता गया। जल्दी ही शांतनु को फायदा होने लगा और वह फिर से धनवान हो गया। कल का चोर आज लखपति बन गया।

पत्नी ने पति से कहा, "स्वामी, अब कर्तव्य पूरा करने का समय आ गया है। एक पल का भी विलंब नहीं कर, हमें जिनदास सेठ का धन सूद के साथ वापस कर देना चाहिये और हार की बात भी समझा देनी चाहिये। जो देना हो वह मामला, जल्दी ही निबटा देना चाहिए।"

शांतनु रुपयों की थैली लेकर सेठजी के पास गये। सेठ दूकान पर बैठे थे। ध्यान उनका रात-दिन भगवान में ही लगा रहता था।

शांतनु ने प्रेमपूर्वक प्रणाम किया।

सेठ जी ने प्रेम से स्वागत करते हुए कहा, "आओ, आओ शांतनु कुमार, बैठो। सब कुशल तो है ?" उन्होंने प्यार से शांतनु की पीठ पर हाथ फिराया।

शांतनु ने रुपयों की थैली सेठ के सामने रख दी और बोले, "सेठ जी, आपकी पवित्र सच्चाई के धन से मेरा तो उद्धार हो गया। आपकी कृपा से मैंने बहुत कमाया। आपका आभार व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। आपका धन आपको लौटाने आया हूं। कृपा करके इसे स्वीकार कीजिये।"

जिनदास सेठ ने शांतनु के सिर पर हाथ फिराया और बोले, "सच्चे दिल से और ईमानदारी से जो व्यवहार करता है उसे कभी-न-कभी सुख अवश्य मिलता है। पुरुषार्थ तो तुम्हारा ही है, उसमें मेरा

उपकार मानना? भगवान महावीर
या से तुम दुःख का सागर पार कर
ो।"

शांतनु की दी रकम तो उन्हें कैसे भी लेनी ही पड़ी। उन्होंने तुरन्त ही अलमारी से हार निकालकर शांतनु को वापस दिया। सेठ जी की उदारता कमाल की थी। शांतनु दंग रह गया।

भींगे स्वर में उसने कहा, "सेठ जी, यह क्या कर रहे हैं आप? मुझे अब और शर्मिन्दा न कीजिये। यह हार तो आपका ही है जिसे मैंने चुराया था। आप ही मुझे यह वापस दे रहे हैं? मैं अपनी सारी जिन्दगी आपको सर्मपित कर दूं भी तब आपका उपकार चुका नहीं पाऊंगा।

"आपने मुझे जहर के बदले अमृत पिलाया है। आपके बदले और कोई होता तो पता नहीं मेरा क्या होता। उसकी कल्पना करते ही मैं कांप उठता हूं। कृपा करके अपना हार अब आप ही रखिये। मुझे और शर्मिदा न कीजिये।"

जिनदास ने सब शांति से सुना और फिर बोले, "भाई, दोष अकेले तुम्हारा नहीं है, मेरा भी है। मैं संघपति कहलाता हूं। समाज में कौन दुःखी है, किसे पैसे की जरूरत है, इस बात का ध्यान रखना मेरा फर्ज हो जाता है। यदि मैंने पहले ही इस बात को समझा होता तो चोरी करने की नौबत न आती।

"आंखें होते हुए भी मैं अन्धा बना रहा, तेरी हालत देख न पाया। अपराधी मैं हूं, तुम नहीं। जब भगवान महावीर पधारेंगें तब मुझे प्रायश्चित करना पड़ेगा।"

कुछ दिनों बाद भगवान महावीर उस उद्यान में पधारे। साथ में हजारों साधु-साध्वी थे। राजा से लेकर रंक सभी प्रभु का उपदेश सुनने आये।

शांतनु हाथ जोड़कर प्रभु के सामने जा खड़ा हुआ और कहने लगा, "भगवन्, मैं हार की चोरी का प्रायश्चित करना चाहता हूं!"

कोने में बैठे जिनदास सेठ खड़े हुए और बोले, "प्रभो, प्रायश्चित मुझे करना चाहिये। अपराधी तो मैं हूं। यदि मैंने इसे पहले से ही सहायता की होती तो यह चोरी करता ही क्यों?"

दोनों प्रायश्चित करते हुए विह्वल हो उठे । प्रायश्चित की सच्ची भावना में

शांतनु का अपराध धुल गया ।

हमारे आगामी प्रकाशन

- कृतज्ञ और कृतघ्न
- भगीरथ
- युधिष्ठिर का स्वर्गारोहण
- ब्रह्मा का गर्वहरण
- शरणागत वत्सलता
- कहानी एक तूफान की
- हजरत निजामुद्दीन औलिया
- अंगुलिमाल
- प्रभु का प्रकाश
- तीन साधु

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना 1938 में महात्मा गांधी की प्रेरणा तथा पेरीन बहन केप्टन के सद्प्रयत्नों से हुई थी। इस संस्था की कोशिश ऐसी राष्ट्रभाषा विकसित करने की रही है, जिसे आम जनता आसानी से समझ सके और जो नागरी व उर्दू दोनों लिपियों में लिखी जा सके। वह भाषा है हिन्दुस्तानी।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा दुनिया के सभी धर्मों से चुनी हुई, ज्ञान और आनन्द से भरी हुई कहानियों की एक सौ किताबों का जो सेट बच्चों के लिए तैयार कर रही है, यह उसकी पहली किस्त है। हर किताब की क़ीमत दो रुपये होगी।

बच्चों की कहानियां

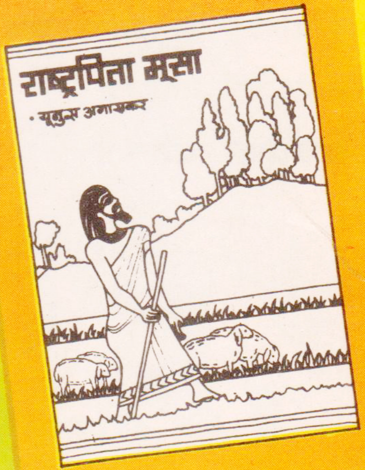

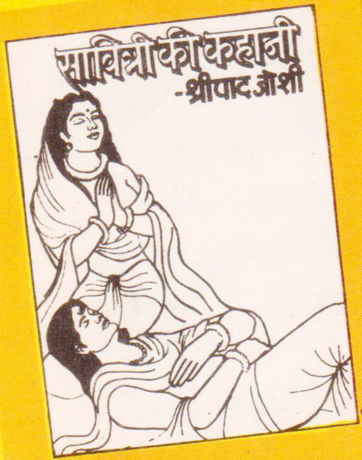

एकमात्र विक्रेता
एस. चांद एंड कंपनी लि.
पो. बॉ. नं. ५७३३
रामनगर
नयी दिल्ली - ११० ०५५